बिहार में कृषि विकास की समस्याएँ

विश्वमोहन कुमार सिंह*
डॉ० प्रेमचन्द्र यादव*

परिचयः

कृषि बिहार की अर्थव्यवस्था का मूल आधार है। अधिकतर आबादी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कृषि पर आश्रित है। पिछले 5 वर्षों में राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र के योगदान में वृद्धि हुई है। वर्तमान मूल्य पर वर्ष 2005–06 में कृषि, पशुपालन एवं मत्स्य क्षेत्र का योगदान 21997 करोड़ रूपये था, जो वर्ष 2015–16 में बढ़कर 45730 करोड़ रूपये हो गया। फिर भी राज्य की अर्थव्यवस्था के चहुमुखी विकास के फलस्वरूप सकल घरेलू उत्पाद में कृषि, पशुपालन एवं मत्स्य क्षेत्र का योगदान 26.29 प्रतिशत से घटकर 20.99 प्रतिशत हो गया। राष्ट्रीय किसान आयोग ने अपने प्रतिवेदन में देश की खाद्य सुरक्षा के लिए प्रदेश में खेती के तेजी से विकास को रेखांकित किया है। भूतपूर्व महामहिम राष्ट्रपति डा० अब्दुल कलाम ने कृषि को बिहार का कोर कम्पीटेंस कहा था। देश भर में बिहार को दूसरे हरित क्रांति का क्षेत्र माना जा रहा है। देश के हर नागरिक की थाली में बिहार के एक व्यंजन का माननीय मुख्यमंत्री जी का एक सपना है।

बिहार में 70 प्रतिशत लोगों की आजीविका कृषि से जुड़ी है और सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान 20 प्रतिशत है। लेकिन, पिछले काफी समय से बिहार के साथ–साथ सम्पूर्ण भारत में भारतीय कृषि उतार–चढ़ाव से जूझ रही है। जिन इलाकों में आत्महत्या के मामले सामने आए, वे कहीं न कहीं मौजूदा ग्रामीण संकट के केंद्र में रहे हैं।

ऐसे में नकारा नहीं जा सकता कि वैश्विक–स्तर पर आर्थिक मंदी और जलवायु परिवर्तन के इस दौर में कृषि नीतियाँ मुख्य रूप से उत्पादन क्षमता बढ़ाने, प्राकृतिक संसाधनों के किफायती उपयोग और बाजार या फिर मौसमी बदलाव से जुड़े जोखिम से निपटने वाले तंत्र पर केंद्रीत होनी चाहिए। वर्ष 2016–17 में मानसून में 12 प्रतिशत की कमी से ही फसलोत्पादन में 3.2 प्रतिशत की कमी देखने को मिली थी। हालांकि, पशुपालन के क्षेत्र में 7.3 प्रतिशत की बढ़ोतरी से काफी हद तक इस कमी की भरपाई हो गई। मगर, 2017–18 में एक बार फिर मानसून ने धोखा दिया और इस बार इसमें 14 प्रतिशत की कमी देखी गई। 1901 से लेकर अब तक ऐसा चौथी बार हुआ, जब लगातार दो सालों तक देश को सूखे का सामना करना पड़ा। इसी तरह ओलावृष्टि और कहीं–कहीं बाढ़ ने भी फसलों को प्रभावित किया। जाहिर है, किसान और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर इसका असर पड़ना तय है।

***शोध छात्र, स्नातकोत्तर अर्थशास्त्र विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा**
***एसोसिएट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग, राम जयपाल कॉलेज, छपरा**

कृषि संबंधी समस्याएँः–बाजार–विक्रय क्षेत्र का सुधार तथा उपभोक्ता को कृषि–उत्पादन की प्राप्ति बिहार के लिए एक गम्भीर समस्या है। दूसरी ओर व्यापारियों के स्थान पर किसान को समुचित लाभ हो यह व्यवस्था भी आवश्यक है। सरकार समुचित परिवहन मार्ग बनाए, भण्डार का प्रबन्ध करे, उत्पादन को उतमता के अनुसार छाँटने का प्रबन्ध करे तथा प्रसारण तन्त्र द्वारा विक्रय सम्बन्धी सूचनाएँ प्रसारित करे।

कृषि सम्बन्धी ज्ञान का अभावः–बिहार में शिक्षित वर्ग की कमी एक गम्भीर समस्या है। यह वर्ग नगरों में केन्द्रित हैं तथा अधिकतर कृषि के अतिरिक्त अन्य आर्थिक कार्यों में लगा है। अतः साधारणतः किसान अशिक्षित तथा कृषि के विकास से अनभिज्ञ हैं। अज्ञानता के कारण सरकारी सुविधाएँ, बैंकों से ऋण, बाजार सम्बन्धी ज्ञान से भी वे वंचित रहते हैं सूचना तथा प्रसारण की सुविधाओं का भी वे उपयोग नहीं कर पाते। बिहार में कृषि का विकास बहुत तीव्र गति से तथा किसानों के एक बड़े वर्ग द्वारा अपनाया जा सकता है, यदि किसान शिक्षित हों, संसार के अन्य भागों में होने वाले विकास के प्रति जागरूक हों तथा रूढ़िगत ढंगों को छोड़ कर कृषि के वैज्ञानिक ढंग अपना सकें।

अन्य प्रदेशों के विपरीत यहाँ की सम्पत्ति छोटे विखरे खेतों के टुकड़े हैं जिन पर शताब्दियों से बिना विश्रान्ति और उर्वरकों के उपयोग से खेती की जा रही है जिससे उत्पादकता न्यूनतम है। यद्यपि कृषि क्षेत्र में विकास के प्रयास किये गए हैं परन्तु उनका प्रभाव बहुत सीमित भागों पर है। भूमि पर क्रमशः बढ़ते दबाव के कारण भू–स्वामी आसामी कृषक भूमिहीन होते जा रहे हैं। पशुओं की असंख्य संख्या इस समस्या को विवर्धित कर रही है। वास्तव में भारत में औद्योगीकरण के पूर्व कृषि के पुनरुद्धार (rechabilitation) की समस्या है।

कृषि–समस्याओं के अन्तर्सम्बन्धी होने के कारण इन समस्याओं को निम्न वर्गों में रखा जा सकता हैं–

भौतिक समस्याएँः

वर्षा– यहाँ की कृषि के लिए सबसे गम्भीर समस्या मानसून की प्रकृति है। उष्ण कटिबन्ध में स्थित होने के कारण बिहार के साथ–साथ सम्पूर्ण भारत में तापमान सालभर पर्याप्त ऊँचा रहता है। यदि पर्याप्त जल मिलता रहे तो साल में कई फसलें पैदा करना कठिन नहीं है। किन्तु दुर्भाग्यवश वर्षा यहाँ केवल 3–4 महीने होती है, अन्य महीने लगभग सूखे रहते हैं, आकाश स्वच्छ रहता है तथा पर्याप्त वाष्पीकरण होता है। अतः वर्ष भर की कृषि की भाग्य–विधाता यह चार महीने की वर्षा ही है।

वर्षा काल में भी वर्षा का प्रति वर्ष समान वितरण नहीं होता। मानसून के आने का समय साधारणतः निश्चित है, किन्तु किसी वर्ष यह जल्दी आ जाता है

अथवा वर्षा–काल समय से पहले समाप्त हो जाता है। ऐसे वर्ष भी होते हैं जब वर्षा–काल के बीच पर्याप्त समय के लिए सूखा मौसम हो जाता है। वर्षा की यह अस्थिरता फसलों को बहुत हानि पहुँचाती है। ऐसे वर्षों में उत्पादन औसत से बहुत कम हो जाता है।

अति वर्षा एक अन्य गम्भीर समस्या है जो पुनः मानसून की विशेषता है। इसी कारण विस्तृत प्रदेशों का जलमग्न हो जाना एक साधारण घटना है। यह समस्या उत्तर बिहार में अधिक गम्भीर है। हिमालय में औसत वर्षा अधिक होती है। अति वृष्टि के कारण यह अतिरिक्त जल नदियों में आता है तथा तटीय प्रदेशों के अपेक्षाकृत नीचे भागों में बाढ़ आ जाती है। बिहार, उत्तर प्रदेश एवं बंगाल के किसी–न–किसी भाग में बाढ़ लगभग प्रतिवर्ष आ जाती है। यह मैदान असाधारण रूप से समतल है, नदियों के किनारे अधिक ऊँचे नहीं है। तलहटियो में निक्षेपण होने से नदियाँ छिछली भी होती जाती है। दक्षिण भारत में केवल पूर्वी तथा पश्चिमी तटीय मैदानों में ही बाढ़ एक गम्भीर समस्या के विकराल रूप धारण करने का एक अन्य कारण यह भी है कि पिछले दशकों में विस्तृत वन–प्रदेश साफ कर दिये गये हैं। यह परिवर्तन, विशेषरूप से पर्वतीय प्रदेशों में हानिकारक होता है। यह एक ओर मिट्टी के काटव की गम्भीर समस्या को जन्म देता है और बाढ़ को बढ़ाता है। अतः इस समस्या के समाधान भी बहुमुखी हैं। वनरोपण, नदियों के बाँध बनाकर जल को विभिन्न मार्गों में बहाना एवं भूमि संरक्षण ये विधियाँ हैं जिनसे विस्तृत कृषि प्रदेशों और उनके उत्पादन को नष्ट होने से बचाया जा सकता हैं।

तापमान का वितरण–उत्तर बिहार में साधारणतः तापमान इतना ऊँचा रहता है कि यदि जल मिल सके तो साल भर कृषि हो सकती है। किन्तु तापमान से भी सम्बन्धित कुछ समस्यायें हैं जो कृषि को हानि पहुँचाती है। अधिक तापमान के कारण वर्षा की प्रभाविता (rainfall effectiveness) कम हो जाती है। इस तथ्य को इस प्रकार समझा जा सकता है कि ऊँचे अक्षांशों में तापमान कम होने के कारण लगभग 50 से.मी. वार्षिक वर्षा से भी फसलों को पर्याप्त जल प्राप्त हो जाता है। यदि जल निकास अच्छा न हो तो ऐसे प्रदेशों में दलदल बन जाते हैं इसके विपरीत 50 से. मी. वर्षा के प्रदेश भारत में सूखे प्रदेश हैं जहाँ एक फसल होना भी कठिन हो जाता है। अधिक तापमान के कारण वाष्पीकरण इतना अधिक होता है कि वर्षा का पूरा लाभ फसलों को नहीं मिलता। इसी से सम्बद्ध एक अन्य समस्या है। वाष्पीकरण के फलस्वरूप मिट्टी का जल भी सूखता जाता है, तथा नीचे की तहों का जल केपिलरी प्रक्रिया से सतह पर आ जाता है। इस जल के साथ विलयशील लवण (soluble salt) भी सतह पर आ जाते हैं। जल तो वाष्पीकरण द्वारा हवा में मिल जाता है किन्तु ये लवण मिट्टी के ऊपर जमते जाते हैं जिससे भूमि कृषि–योग्य नहीं रह जाती। इस प्रकार भूमि के नष्ट होने की समस्या भारत के लगभग सभी भागों में

मिलती हैं। विशेषरूप से इस प्रकार के ऊसर प्रदेश सूखे भागों के सिंचित प्रदेशों में मिलते हैं जहाँ अधिक तापमान के कारण वाष्पीकरण बहुत तीव्र गति से होता है।

तापमान से सम्बन्धित एक अन्य समस्या है। शीतकाल में रबी की फसल उत्तर बिहार के अधिकतर भागों में बहुत महत्त्वपूर्ण है, विशेषरूप से इसलिए कि इसमें गेहूँ पैदा होता है। शीतकाल में गेंहूँ के लिए तापमान उपयुक्त रहता है, किन्तु फरवरी के बाद इतनी तीव्रता से बढ़ता है कि गेंहूँ कुछ ही दिनों में पक जाता है। दानों को बड़े होने का समय नहीं मिलता। यही कारण है कि यहाँ का गेंहूँ श्रेष्ठ प्रकार का नहीं होता।

ऋणग्रस्तता–केवल बागवानी कृषि, दुग्धोद्योग जैसी कृषि में लगे कृषकों के अलावा अधिकांश ऋण कृषि में पूँजी लगाने के लिए नहीं लिये जाते, बल्कि इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक परम्पराओं का निर्वाह करना होता है। ऋणग्रस्तता के कारणों में जोत का छोटा होना, जलवायु का प्रतिकूल होना, कृषक की अज्ञानता और उसकी भंडार की सुविधा का न होना प्रमुख हैं। अतः प्राकृतिक आपत्ति या सामाजिक उत्सवों में ऋण के अलावा कोई सहारा नहीं होता। ग्रामीण साख सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि लगभग इससे ऋण लेने पर गरीब कृषक तथा श्रमिक दास–सा बना रहता है। इससे भी अधिक (लगभग आधा) ऋण साहूकारों से लिया जाता है, जिनकी ब्याज दर अधिक होती है। आपत्ति में ऋण देने के लिए सहकारी समितियाँ साख योजनाएँ आदि बनाई गई हैं। पुनः इन समितियों; बैंकों आदि से ऋण केवल बड़े कृषक ही पाते हैं तथा अब भी छोटे गरीब आश्रित कृषकों के धन के स्रोत परम्परागत साहूकार ही हैं।

कृषि पद्धतियों से सम्बन्धित समस्याएँ:–स्वतंत्र होने के समय कृषि पद्धतियाँ बहुत पिछड़ी हुई थी। पिछली कई शताब्दियों से उनमें कोई परिवर्तन नहीं हुए थे। सघन कृषि आवश्यक होती है, किन्तु उसका आधार पूँजी न होकर मानवीय श्रम है। इस दृष्टि से भारतीय और पाश्चात्य कृषि–पद्धतियों में आधारभूत अन्तर है। हमारे यहाँ सभी कृषि कार्य मानवीय श्रम द्वारा सम्पन्न किया जाता है, तथा कुछ सहायता पशुओं से भी ली जाती है। यही कारण है कि एक ओर जनसंख्या का 65.5 प्रतिशत मात्र कृषि से जीविका पाता है और दूसरी ओर कृषि अधिक कुशलतापूर्वक नहीं हो पाती है। इसके विपरीत पाश्चात्य देशों में केवल बहुत थोड़ी जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है (संयुक्त राज्य 2.1:, कनाडा 2.8:ए फ्रांस 4. 5:ए जापान 5.5:)। फिर भी पूँजी के विनियोग द्वारा मशीनों, खादों तथा कीटाणुनाशक रसायनों के प्रयोग आदि से कृषि की कुशलता और प्रति हेक्टर उपज बढ़ी हैं।

यह आवश्यक है कि कुछ भागों में प्राकृतिक कारक कृषि के अधिक उपयुक्त नहीं हैं, फलस्वरूप प्रति एकड़ उत्पादन अधिक नहीं हो पाता। बिहार में

वर्षा सम्बन्धी समस्याओं के अतिरिक्त अन्य प्राकृतिक कारक, जैसे तापमान, मिट्टी, धरातलीय बनावट इत्यादि कृषि के लिए बहुत उपयुक्त हैं। अतः इस निष्कर्ष पर पहुँचना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यहाँ की कृषि की मूल समस्या कृषि पद्धतियाँ हैं। इन कृषि–पद्धतियों से सम्बन्धित समस्याओं में से खाद और उर्वरकों की समस्या, सिंचाई की कमी, कृषि उपकरण का पिछड़ा होना, उन्नत बीजों की कमी जल जमाव, बाढ़ तथा सड़क एवं बाजार की असुविधाएँ उल्लेखनीय हैं।

उर्वरकों की समस्या–बिहार में न केवल उपजदर बहुत कम है बल्कि यह निरंतर कम भी हुई है। इसका मुख्य कारण मिट्टी की उर्वराशक्ति का सतत उपयोग तथा खाद और उर्वरकों की अति कमी है। यह अज्ञानता के कारण नहीं है बल्कि अति छोटी जोत के कारण नाइट्रोजन–प्रधान फसल उगाना–आदि कृषकों की सीमा के परे है। गाँवों में इधन की कमी के कारण अधिकांश गोबर भी जला दिया जाता हे। लगभग 40 प्रतिशत गोबर खाद के रूप में प्रयुक्त होता है। इनके स्थान पर रासायनिक खादों का अपेक्षाकृत होता है। हरी खाद, कम्पोस्ट आदि का प्रयोग सीमित है। इनके स्थान पर रासायनिक खादों का अपेक्षाकृत बहुत कम प्रयोग होता है।

उपकरण, बीज, परिवहन तथा बाजार की कमी– अति न्यून उत्पादकता का एक कारण कृषि तकनीकी का पिछड़ा होना है। अपने कम वजन और न्यून आकर्षण–शक्ति की आवश्कता के कारण लकड़ी का हल प्रमुख उपकरण है और विपुल जनशक्ति के कारण ट्रैक्टर का विस्तृत उपयोग अनिवार्य नहीं है। फिर भी कई कृषि उपकरणों का संशोधित तथा उन्नत रूपों का उपयोग करके कम समय में कृषक की क्षमता बढ़ाई जा सकती है। ऐसे यन्त्रों में बीज ड्रिल, गहाई और ओसाई के यन्त्र, गन्ना पेरने की मशीन तथा तेल निकालने के अधिक सक्षम कोल्हू, पानी खीचने के अधिक प्रभावी यन्त्र उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार संशोधित उपकरणों के प्रयोग से लगभग दस प्रतिशत उत्पादन बढ़ाया जा सकता हैं।

यन्त्रों की भाँति उन्नत बीजों का प्रचार और प्रसार सीमित है। उदाहरणस्वरूप सन् 2016–17 में कुल चावल के क्षेत्र का 57ः तथा गेंहूँ के क्षेत्र के 83.4ः भाग पर परन्तु मक्का के क्षेत्र का 32.7ः बाजरा क्षेत्र के 41.7ः तथा जवार के क्षेत्र के 31.6ः भाग पर ही उन्नत बीजों का प्रयोग किया गया था। ये बीज उत्पादकता तो बढ़ाते ही हैं, कुछ प्राकृतिक प्रतिकूल परिस्थितियों से सुरक्षा भी करते हैं। इनका लाभ यहाँ के किसानों को नहीं मिल पाता। विभिन्न रोग, जीव–जन्तु तथा पशुओं से सुरक्षा के साधनों का प्रचलन भी बहुत कम है। इसकी कमी के कारणों में यातायात के साधनों की कमी प्रमुख है, जिनसे कृषि की उन्नत विधियाँ ग्रामीणों तक आसानी से नहीं पहुँच पा रही है। कृषि के व्यापारीकरण में भी यही बाधा है। कुछ विकसित कृषि वाले क्षेत्रों (विशेषतः कपास, गन्ना तथा व्यापारिक फसलों के भागों) को छोड़कर अन्यत्र बाजार की सुविधा भी बहुत कम है, जिससे मध्यस्थों के कारण कृषकों को अपने उत्पादों का उचित मूल्य नहीं मिल पाता।

वास्तव में प्रारम्भ में ये सभी सुविधाएँ सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ के कृषक गरीबी, अशिक्षा और सांस्कृतिक परम्पराओं के कारण स्वयं विकसित तकनीकी को प्राप्त करने की तो सोच भी नहीं पाता, बल्कि इनसे परिचित कराने पर भी ग्रहण करने में शंकालु रहता हैं। ऐसे सामाजिक–आर्थिक परिवेश में सरकार को ही कृषि–विकास के कदम उठाने पड़ेंगे।

संदर्भ स्रोतः–

1. राकेश बहादूर सिंह (2007–08), बिहार में आर्थिक उपार्जन एवं पिछड़ापन, जेनरल बुक एजेन्सी, पटना।
2. आर्थर लेविस (1947), इकॉनामिक्स ऑफ प्लानिंग एण्ड ग्रोथ, आक्सफोर्ड।
3. राकेश बहादूर सिंह (2007–08), बिहार में आर्थिक उपार्जन एवं पिछड़ापन, जेनरल बुक एजेन्सी, पटना।
4. बिहार सरकार (2004), सांख्यिकी पुस्तिका, सांख्यिकी एवं मूल्यांकन निदेशालय।
5. एस. आर. बोस, (1975) इकॉनामी ऑफ बिहार, नेशनल पब्लिकेशन, कलकत्ता।
6. इमत्याज़ अहमद एवं कमर अहसन (2009), बिहार एक परिचय, नेशनल पब्लिकेशन, पटना।